आधी आबादी का अनादर

महिलाओ के संदर्भ में समाज से अपने पूर्वाग्रह छोड़ने और परिपक्व दृष्टि प्रदर्शित करने की अपेक्षा कर रहे हैं प्रो. गिरीश्वर मिश्र

महिलाएं हमारे समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं और जटिल हो रहे आज के जीवन में घर से बाहर भी वे बहुआयामी दायित्व का निर्वाह कर रही हैं। हालांकि उनकी स्थिति, उनके अधिकार अभी भी ठीक से न तो समझे गए हैं और न उन पर ध्यान ही दिया गया है। सतही तौर पर स्त्रियों को लेकर बहुत कुछ कहा-सुना जाता है और उनके सम्मान में गाहे-बगाहे कसीदा भी कढ़ा जाता है और अवसर मिलने पर उन्हें महत्व देने का दिखावा भी किया जाता है। महिलाओं का आदर-सम्मान एक परंपरागत भारतीय आदर्श है और सैद्धांतिक रूप से उसे समाज में स्वीकृति भी मिली है। उन्हें 'देवी' कहा जाता है। दुर्गा, सरस्वती और लक्ष्मी के रूप में उनकी अर्चना और स्तुति भी धूमधाम से की जाती है। कोई भी पूजा गौरी और गणेश से ही शुरू होती है। यह सब इसलिए कि पुरुष वर्ग की समृद्धि में बढ़त हो, उसे और शक्ति मिले तथा उसका सामर्थ्य असीम हो। पर वर्तमान में जिस तरह स्त्रियों के प्रति हिंसा तेजी से बढ़ रही है उससे स्त्रियों के प्रति हमारी प्रतिबद्धता पर सवाल खड़े होते हैं और हमारी मानसिकता व सोच को लेकर संदेह पैदा होता है। स्त्री के साथ जो कुछ हो रहा है खास तौर पर नगरों और महानगरों में, ऊंचे तबकों में, पढ़े लिखों की बिरादरी में वह रोंगटे खड़ा करने वाला है। अपराधी को छोड़ भी दें तो समाज के पहरेदार ही जब रक्षक से भक्षक बन बैठें तो क्या हश्र होगा? आज हालत यह है कि नवजात लड़कियों से लेकर महिलाओं तक के साथ तरह-तरह के शोषण व अन्याय की घटनाएं देखने-सुनने को मिलती रहती हैं। स्थिति दिनोंदिन शर्मनाक और चिंताजनक होती जा रही है। संविधान में समान काम के लिए समान मजदूरी और अवसरों की समानता पर स्वीकृति अवश्य है, परंतु व्यवहार में ऐसा शायद ही होता हो। उन्हें वह स्वतंत्रता नहीं मिल सकी है जिसकी वे हकदार हैं। यौन अपराधों में तेजी से इजाफा हुआ है। निर्भया की स्मृति अभी ताजी है। महिलाएं घर से बाहर खुद को सुरक्षित नहीं महसूस करतीं। समाज में स्त्रियों की योग्यता और क्षमता का पूरा उपयोग नहीं किया जाता है। उन्हें अक्सर हाशिये पर ढकेल दिया जाता है। निम्न जाति, दलित, अल्पसंख्यक, ग्रामीण और गरीब महिलाओं की स्थिति तो और भी भयावह है। उन्हें किस्म-किस्म के समझौते करने पड़ते हैं।

आज प्रशासन, सामाजिक सेवा, संगीत, नृत्य, खेल, फिल्म, व्यापार, साहित्य, कला और संस्कृति की दुनिया में कुछ स्त्रियों ने बहुत नाम कमाया है। वे देश के ऊंचे से ऊंचे पद पर भी आसीन हो चुकी हैं। हमें इन उपलब्धियों पर गर्व है, पर इससे स्त्री की जमीनी हकीकत में कोई क्रांतिकारी बदलाव आया हो, यह नहीं कहा जा सकता। यह स्थिति केवल आधा-अधूरा सच ही बयां करती है। इससे अधिकांश स्त्रियों के जीवन के संदर्भ में इस कड़वे सच को झुठलाया नहीं जा सकता कि वे मनुष्य से कमतर मानी जाती हैं। सच यही है कि समाज में उनका स्थान काफी नीचे आता है। स्त्रियों की शिक्षा, आय और स्वास्थ्य की दशा में गिरावट देखी जा सकती है। घर की चहारदीवारी में कैद उनका योगदान अक्सर अनदेखा-अनसुना ही रह जाता है। असंगठित क्षेत्र में काम कर रही महिलाओं का भी यही हाल है। कुल मिलाकर बहुसंख्या में तमाम स्त्रियां वंचित स्थिति में जीने को विवश हैं।

स्त्री का पूरा जीवन ही दुर्घटनाओं से भरा रहता है, बल्कि कहें कि जीवन का पूरा रंग ही दुखद होता है। जन्म के पहले ही यह करुण गाथा शुरू हो जाती है जब लड़के की चाह में कन्या भ्रूणहत्या को अंजाम दिया जाता है। देश में लिंगानुपात कई जगह घटा है। लड़के न पैदा होने पर महिला को ही दोषी ठहराया जाता है। इतना ही नहीं जन्म के बाद कन्या शिशु के साथ घर में बेईमानी की जाती है। थोड़ी बड़ी हुई तो सम्मान की रक्षा के लिए उनकी हत्या तक कर दी जाती है। दहेज हत्या आज एक सामान्य बात है। कामकाजी महिलाओं को दोहरी ड्यूटी निभानी पड़ती है जिससे उन्हें अत्यधिक तनाव का सामना करना पड़ता है। परिवार की सहानुभूति और समर्थन के बिना उनके लिए जीना मुश्किल हो जाता है। वृद्धावस्था में वे पति और बच्चों पर निर्भर रहती हैं। स्त्री को सक्षम, आत्मनिर्भर और उत्पादनशील बनाने का सपना अधूरा है। स्त्रियों को न सिर्फ कुंठा का शिकार होना पड़ता है, बल्कि उनके सामाजिक योगदान को भी नकारा जाता है। घर, नौकरी, बाजार सबके बीच संतुलन बैठाना एक कठिन चुनौती होती है। स्त्री को सबके साथ तालमेल बिठाना होता है। मीडिया और बाजार ने उनकी जिद्दोजहद को बढ़ा दिया है। उपभोक्तावाद ने स्त्रियों को वस्तु के रूप में परिवर्तित कर दिया है। वे भोग्या के रूप में प्रस्तुत की जाती हैं और उनकी देह का विज्ञापन जगत में उपयोग होता है। ऐसे दबाव में महिलाओं की जीवनशैली बदल रही है, उनकी जरूरतें, इच्छाएं कशमकश पैदा करती हैं। विज्ञापन विभिन्न युक्तियों से उनका दिमाग बदलते हैं और कई महिलाएं बाजार के दुष्चक्र में फंसकर फिजूलखर्ची का शिकार भी होती हैं। टीवी के माध्यम से निष्क्रिय मनोरंजन, व्यायाम के अभाव आदि से स्त्रियों में तमाम रोग तेजी से बढ़ रहे हैं।

परंपरागत भारतीय समाज में स्त्रियों के जीवन में बड़े उतार-चढ़ाव आए हैं। उनके आदर सम्मान में बदलाव आया है। पितृसत्तात्मक और कृषि आधारित समाज में उनकी स्थिति भिन्न थी। शिक्षा का अभाव था। रोग, भेदभाव, संत्रास ही उनका सच था। स्त्रियों को लेकर कई तरह के पूर्वाग्रह व्याप्त हैं और पुरुषों के मन में गहरे पैठे हुए हैं। उनमें कई निराधार हैं। महिलाओं की योग्यता और क्षमता को कमतर देखा जाता है। दूसरी ओर उनके दायित्व क्षमता की अनदेखी करते हैं। फलतः वे जीवन में पुरुषों से पिछड़ जाती हैं। उन्हें वह समर्थन नहीं मिल पाता जिसकी जरूरत होती है। स्त्रियों की जिंदगी को लेकर हमें अपना मानसिक दृष्टिकोण बदलना होगा। इस संदर्भ में पूर्वाग्रह मुक्त और परिपक्व दृष्टि की जरूरत है। स्त्रियों की छवि बदलनी होगी जो समझदारी और सहिष्णुता के साथ स्त्रियों को भी विकास के अवसर दे। इस हेतु कड़े नीतिगत हस्तक्षेप जरूरी हैं।

(लेखक महात्मा गांधी हिंदी विवि के कुलपति हैं)
response@jagran.com

सोच पर सवाल

♦ वर्तमान में जिस तरह स्त्रियों के प्रति हिंसा बढ़ रही है उससे उनके प्रति हमारी प्रतिबद्धता पर सवाल खड़े होते हैं और हमारी सोच को लेकर संदेह पैदा होता है